ललद्यद व मीराबाई: वैचारिक साम्य

डॉ० भारतेंदु कुमार पाठक

ललद्यद व मीराबाई दोनों के चरित्रगत व व्यक्तित्व तथा साहित्य में कुछेक साम्य है। प्रथम यह कि दोनों नारी हैं। दोनों परित्यक्ता हैं। दोनों समाज द्वारा तिरस्कृत थी। दोनों ने पति को भजने के स्थान पर जगतपति को भजा। दोनों के वचन में 'प्रेम' तत्व प्रमुख है। आडम्बर दोनो के लिए व्यर्थ था। लल वचन है-

"गोर न वो नु नम कुनुय वचु न"

"गुरु ने मुझे एक ही वचन की दीक्षा दी- बाहर से भीतर(अंदर) चली जा। इसी एक वचन ने मेरी काया पलट दी और मैं नंगी(विवस्त्र) नाचने लगी।"1 यहा बाहर से भीतर जाने की चर्चा की गयी है- क्योंकि अंतरंग तत्व आत्म तत्व के दर्शन के अभाव में सब कुछ व्यर्थ हो जाता है- भक्त के हृदय में रसेश्वर का वास होता है- गीताकार ने भी कहा है-

"ईश्वर:सर्वभूतानां हृदे- तिष्ठति।"[2]

अर्थात अंतर स्थित वस्तु के दर्शनार्थ अंतमुर्खी होना पडता है।

ललद्यद को गुरु ने यह बात बताई थी कि बाहर से भीतर जा--- ठीक इसी प्रकार मीराबाई को भी गुरु ने ही कुछ उपदेश देकर बहुमूल्य वस्तु को दिया था-

"वस्तु अमोलक दी मेरे गुरु ने कृपा करहि अपनायो

पायो जी, मैं तो राम-रतन धन पायो।"

और मीरा भी समाजिक भय का त्याग कर प्रेम पान करके नाचने लगी, यथा-

"पग घुघुरु बाँध मीरा नाची री ।"

यह संसार माया लिप्त है। अत: प्रेम को अपनाकर प्रभु को स्मरण करना ही भक्त के लिए प्रधान बन जाता है । किंतु सांसारिक लोग इस तथ्य को नहीं जान पातें- वे इसके विपरीत भक्त की निंदा करते हैं, जैसा कि मीरा ने बताया है-

कोई कहे महँगो, कोई कहे सहँगो,

"लियो री बंजता ढोल।"

अत: ललद्यद ने अभक्त को भक्ति का उपदेश नहीं करना उचित समझा है, यथा -

"मूडस ग्यानु च कथ नो वनिजे ।"

"अर्थात मूढ को न की बात कभी कहना नहीं, गधे को कभी गुड खिलाना नहीं। जो जैसा करेगा,सो वेसा भरेगा,तू व्यर्थ अपने को कुएँ में ढकेलना नहीं ।"[3]

ललद्यद अपने मन को समझा रही है-

"हा च्यता कवु छुय लोगमुत परमस,

रे चित्त! तू क्यों आसक्ति में पडा हुआ है? क्यों झूठ में तुझे सच की प्रतीति होती है ? तू दुर्बुद्धि के कारण परधर्मी बन गया है ।"[4] उसी प्रकार मीराबाई भी अपने मन को संबोधित करते हुए कहा है-

"मन रे परसि हरि के चरन।

सुभग शीतल कमल कोमल विविध ज्वाला हर न॥

दासि मीरा लाल गिरधर अगम तारन तरन॥"[5]

उसी प्रकार ललद्यद ईश्वर से सम्वाद भी करती है-

" हे गो'रा परमेश्वरा,

हे मेरे गुरु-परमेश्वर! आप अंतर्यामी(सर्व) हैं, अत: मुझे अल्प यह समझाए-"[6]

उसी प्रकार 'मीरा' भी प्रभु को मधुर संदेश देती है---

"बसो मेरे नैनन में नंदलाल।

मीरा प्रभु संतन सुखदाई, भक्तवच्छल गोपाल।"7

और जीवन पर्यन्त प्रभुमय होकर मीरा ने जीवन व्यतीत किया होगा। साम्य की भाँति वैषम्य भी देखा जा सकता है- किंतु आंतरिक तथ्य साम्य क ही अधिक है-क्योंकि मनुष्य स्वस्थ होकर अपने स्वभाव में लीन होना चाहता है।स्वस्थ होना अर्थात अपने में स्थित होना और अपने ब्रह्मय शिवमय स्वरुप में मिल जाना व जगत व ब्रह्म को अभेद मानकर आनंद अनुभव करना साधना का चरमोत्कर्ष व जीवन का परम लक्ष्य है।

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि ललद्यद व मीरा दोनों की अनुभूति में साम्य है—और लक्ष्य व उद्देश भी समान है, दोनों प्रेम-योगिनी हैं- दोनों भक्त हैं- दोनों नारी हैं। दोनों की संवेदना अभेद है। तथास्तु।

संदर्भ-

1.'ललद्यद'-जयालाल कौल- सा०अकादेमी-दिल्ली-1980-पृ०-80

2. श्रीमद्भगवद्गीता- व्यास- गीताप्रेस गोरखपुर,उ०प्र०-

सम्वत-2069- पृ०-102,अध्याय₩ 18

3. 'ललद्यद' –पृ०-79

4. उपर्युक्त -पृ०-78

5. हि०सा०का इतिहास-आ०शुक्ल,ना०प्र०सभा, काशी,38वा

संस्करण, संवत-2057–पृ०-102

6. 'ललद्यद' –पृ०-93

7. हि०सा० का इतिहास-आ०शुक्ल, पृ०-102